अध्याय - 6

पं. नरेंद्र शर्मा के खंडकाव्य : जीवनदर्शन

अध्याय - 6

नरेंद्र शर्मा के खंडकाव्य: जीवनदर्शन

दर्शन शब्द दृश्य धातु से बना हैं जिसका अर्थ हैं देखना। इसप्रकार दर्शन से अभिप्राय स्थूल नेत्रों से स्थूल तथा सूक्ष्म नेत्रों से सूक्ष्म तत्वों को देखना। आधुनिक युग में दर्शन शब्द सामान्यतः जीवन दृष्टि के लिए प्रयुक्त होता है।"व्यक्ति के हृदय में जीवन और जगत् के विषय में जो जो जिज्ञासाएँ तथा प्रश्न उत्पन्न होते है, उन जिज्ञासाओ प्रश्नों एवं रहस्यों का वह अपने व्यक्तिगत विश्लेषण के उपरांत जो निष्कर्ष प्राप्त करता हैं वही उसका जीवन दर्शन हैं।। यह दर्शन भौतिक अथवा अध्यात्मिक किसी भी प्रकार हो सकता हैं। फिर भी भौतिकता और अध्यात्मिकता में कोई निश्चित सीमारेखा निर्धारित नहीं कि जा सकती, क्योंकि दोनों तत्व अन्योनाश्रित हैं। दोनों का लक्ष्य मानव जीवन को सुख और शाति प्रदान करता हैं।

सामान्य दृष्टि से देखा जाय तो भौतिक दर्शन के अंतर्गत —क्ति समाज, राष्ट्र तथा अन्तर्राष्ट्रीयता के व्यापक मानवतावादी दृष्टिकोण को लिया जा सकता है। आध्यात्मिक दर्शन के अंतर्गत ब्रम्ह, जीवात्मा, सृष्टि तथा माया आदि के स्वरुप पर विचार किया जाता है। काव्य मे अनुभूति की तथा दर्शन मे चिन्तन की प्रधानता होती है। इस प्रकार अनुभूति तथा चिंतन और काव्य एव दर्शन के समन्वय से जीवन को सही दिशा मिलती है। यद्यपि आधुनिक युग मे ब्रम्ह, जीव , माया, जगत् एव मोक्ष आदि का स्वरुप पौराणिक कालीन या मध्ययुगीन नही रहा और उनमे युग एव परिस्थितियों के अनुरुप बहुतकुछ परिवर्तन भी दिख पडता हैं।2 इस दृष्टि से देखा जाए तो शर्माजी एक आस्थावादी आस्तिक कवि हैं और उन्होंने अपने काव्य मे परंपरागत तथ्योंकी भी सर्वथा उपेक्षा नहीं की।

श्री. नरेद्र शर्मा ने अपने प्रबंध काव्यों की सामग्री प्राचीन भारतीय जीवन से ग्रहण की है। उनके काव्यो के कथानक आज के युग के न होकर प्राचीन युग के हैं। पात्र भी पौराणिक ओर ऐतिहासिक होते हुए भी अपनसे युग की विशेषताओं से कवि अछूते नही रहे। कवि ने प्राचीन काल के कथानकों ओर पात्रो को लेकर आज के युग की समस्याओं पर विचार किया है।

उनके काव्य में चित्रित पात्र ऐसे होते हैं जैसे वे आज के युग में विचरण कर रहे है। 3 सचमुच प्राचीन पौराणिक प्रसंगो का सहारा लेते हुए नरेद्रजीने अपने काव्यों की निर्मिती इस प्रकार की है कि उससे वर्तमान काल की समस्याओ का हल सूझे और भावी मानवीय सस्कृति को भी कुछ प्रकाश मिल जाए। इसीलिए नरेद्रजीका अध्यात्मिक दृष्टिकोण विशुध्द परंपरावादी नही है, बल्कि उनके आधात्मिक दर्शन में भौतिकता का समावेश भी हो गया है। इस दृष्टि से कवि को द्रौपदी और उत्तरजय में चित्रित दर्शन के दो भेद आध्यात्मिक और भौतिक का निर्वाह कहाँतक हुआ है इसकी चर्चा प्रस्तुत अध्याय में करेगे।

द्रौपदी

द्रौपदी खंडकाव्य में प नरेंद्र शर्मा का अपना जीवनदर्शन पूर्णत: स्पष्ट है। कवि ने प्रमुख रुप से द्रौपदी के माध्यम से अपने नूतन अध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया हैं। अपने व्यापक अध्यात्मिक दृष्टिकोण के बीजमंत्र कवि को महाभारत में ही मिल गये थे। जीवन की उदात्त प्रेरणा लुप्त स्वत्व और स्वत्वो को प्राप्त कारनेका अपार उद्योग और खोई सत्ता की प्राप्ति की लौकिक कथा धारा के मूल में पाँच महातत्वों की समस्त विकासशील प्रक्रिया द्रोपदी के रूप विद्यमान है। पंडितजीने अपने अध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते हुए कहा है-" मेरा उद्देश्य कथा के संबंध में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करना हैं, इस उद्देश्य के अनुरुप मैंने बीजदृष्टि और लाघिमा शैली को अपनाया हैं। "4 इससे यह स्पष्ट हो जाता हैं कि कवि द्रौपदी खंडकाव्य के माध्यम से अपना आधात्मिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करना चाहता हैं और उसमें वह सफल भी रहा हैं।

१) **आध्यात्मिक दृष्टिकोण-** कविने अपने आध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने के लिए 'द्रौपदी' जैसी प्राचीन पौराणिक कथा को ही चुना हैं। कविका कथन हैं"राष्ट्रीय अंत:करण के निर्माण में पुराण कथाओं का बडा हाथ होता हैं। भारतीय जनमानस पर भारत की पुराण कथाओं का गहरा प्रभाव हैं।" सुधार प्रगति या आधुनिकता के नामपर अचेतन जनमानस और पुराण कथाओं से आज का काव्य अछूता असंपृक्त रहें यह उचित नही हैं।"5 इस दृष्टिसे कवि की रुचि और दृष्टि यह रही हैं कि उन्होंने अपने देश काल और मन:स्थिति का पौराणिक कथाओंपर आरोपण न करके उनके मर्मबीज खोजने का प्रयास किया हैं इस संदर्भ में कवि कहते हैं--" मैंने द्रौपदी को, जीवनीशक्ति और पांडवों को पाँच महातत्वों के रुप में देखा हैं न कि प्राचीन काल में बहुपति प्रथा के प्रचलन के उदाहरण की सामग्री के रुप में।"6 इससे यह स्पष्ट होता हैं कि

कविने द्रौपदी की पौराणिक कथा की प्रतीकात्मक और भावात्मक व्याख्या के द्वारा अपने आध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रस्तुत कर उसका पुनर्मूल्यांकन किया हैं।

कवि ने 'द्रौपदी' की कथागत प्रतीकात्मक और व्याख्यात्मक व्याख्या को कथावस्तु और चरित्रचित्रण में प्रस्तुत किया हैं। 'द्रौपदी' में मानव जीवनीशक्ति की सहायता से अपने लुप्त सत्वों की प्राप्ति करता हैं। जीवनीशक्ति द्वारा पाँच तत्वों को दिव्य कलेवर में संश्लिष्ट करने के पश्चात अपने अधिक अधिकारों की प्राप्ति के द्वारा उसे वहाँ महत् रुप दिया गया हैं। द्रौपदी स्वयंवर से पहले जो क्षत्रिय होकर भी ब्राम्हण वेष में भिक्षाटन करते थे, द्रौपदी के संयोग से स्वधर्म और पैतृक राज्य को पुनः प्राप्त कर लेते हैं।

मनुष्य का अवचेतन मन सदा अपनी ओर लगाना चाहता हैं। ममता और स्वार्थ से अंधा मनुष्य अपने मन में अनेक इच्छाएँ करता हैं। मनुष्य में स्थित तामसी वृतियाँ अवैध भावनाएँ तथा दुराग्रह उसे आस्था, श्रध्दा और सद्मति से दूर रखना चाहते हैं। जिससे तामसी और सात्विक वृतियों में सदैव संघर्ष चलता हैं।"7 नरेंद्र शर्मा की मान्यता हैं कि मानव के हृदय में स्थित आसुरी वृतियाँ दैवी वृतियों की अपेक्षा अधिक बलवान हैं, इसीलिए तो अनेक सुधार- प्रयत्नों तथा महापुरुषों के असंख्य बलिदानों के उपरांत भी संसार वहीं का वहीं हैं।

इस प्रकार 'द्रौपदी' की कथापर आध्यात्मिकता का प्रभाव स्पष्ट हैं और कविने गहराईयों में उतरकर नये आयाम और अर्थ को स्पष्ट किया हैं। कवि ने इसमें बाहय तथा आंतरिक और भौतिक एवं आध्यात्मिक संघर्ष को देकर कथा की परिणति लोकमगल एव आदर्श की उदात्त भावना में हुई है।

2) **नारी के तेजबल का गुणगान-** नारी प्राणदायी हैं। नारी के प्रेरणा पुरुष को महान कलाकार, महान कवि और महान उद्यमी बना सकती हैं। वह समाज में सरसता का संचार कर सृजन कार्य को सुचारु रुप से संचलित करती हैं। नारी जब नर के सम्मुख नारी रुप में आती हैं तो वह नर के आधे रुप को पूर्ण करने के लिए अर्धांगिनी के वेष में अवतरित होती हैं। मनुष्य नारी को प्राप्त करने के लिए अपने प्राणों का मोह त्याग करके भी अध्यात्मिक कठोर और भयंकर से भयंकर कार्य करने को सहर्ष तैयार हो जाता हैं।"8 इस दृष्टिसे द्रौपदी खंडकाव्य द्वारा कवि का दूसरा लक्ष्य रहा हैं- नारी के तेजबल का गुणगान करना। इस संदर्भ में कविने ने लिखा हैं-- द्रौपदी में मैंने भारतीय नारी के तेजबल का गुणगान किया है। नारी की दहनशक्ति-सहनशक्ति और दहन सहनशक्ति की ओर बार-बार संकेत किया गया हैं।"9

अनादि काल से नारी नर की मर्यादा रही हैं, नर ने जब - जब नारी की मर्यादा तोडी तब-तब भयानक सर्वनाश हुआ, और जब-जब उसका उचित सम्मान किया तो कीर्ति और विजय की प्राप्ति की। द्रोपदी के अपमान और लांछना के परिणामस्वरुप कौरवों का भयानक सर्वनाश हुआ पर पांडवोंद्वारा उसका उचित सम्मान करनेपर अपने जीवन में श्री कीर्ति और विजय पाई। महाभारत का युध्द इसी अर्थ में धर्मयुध्द हैं। नारी पुरुषोंमें लुप्त शक्तिको जागृत करनेका महान कार्य करती है। द्रोपदी ने पाडव पुरुषो में शाश्वत जीवन-शक्ति की दीप्ति प्रज्वलित कर युध्द की ओर उन्मुख किया और विजय के पथपर प्रवृत्त किया, तो धर्म और न्याय का सपृथ था। नर की इस विजय का मूल्य नारी सदा अपनी अपरिमित दहन और सहनशक्ति से चुकाती आयी हैं, पृथा माता ने अपने वैध पुत्रों के लिए कर्ण जैसे अवैध पुत्र की बलि दी। सुभद्रा ने अभिमन्यु, द्रौपदी ने पाँच पांडव पुत्रोंकी और गांधारी ने शत पुत्रोंकी बलि दी इसलिए कहा गया हैं कि नारी के त्याग के बिना धर्मराज की विजय सर्वथा असभव थी।

कविने द्रोपदी काव्य की अपनी भूमिका में लिखा हैं, वर्षों पहले मैने भारत की नारी के प्रति लिखा था -

"बनो पुन: चैतन्य लपट ओ भस्मावृत्त चिनगारी।
क्षत्रिय हलाहल मदमय नयना, तुम भारत की नारी।"।0

वस्तुत: द्रौपदी एक माध्यम हैं, जिसके द्वारा भारत के नारीत्व की व्यजना कवि ने की है जो तेजोमयी प्रभाव-शालिनी, अविस्मरणीय और दीप्तशालीनी हैं।

पं. नरेंद्र शर्मा की "द्रौपदी" आज के परिवेश में असाधारण महत्व रखती है। शाश्वत जीवनीशक्ति की प्रतीक द्रौपदी का नारीत्व आज के पांडव रुप पुरुषों में शक्ति प्रेरित कर्म का तेज भरकर अंधकारमय जीवन को, गतिशील और उन्नतिशील कर सकती है या नही? आज के परिवेश में घुटन और विघटन से पीडित भारत को संदेश देने की जीवनीशक्ति सिर्फ द्रौपदी (नारी)में हैं। कवि का विश्वास हैं तथा आध्यात्मिक निष्ठा है, कि नारी सुकुमार है, सुंदरता हैं और ममतामयी भी हैं। पर वह सुप्त पौरुष में चैतन्य की शिखा को प्रज्वलित करनेवाली शाश्वत शक्ति भी है। उसके एक हाथ में विष का पात्र हैं, दूसरे में अमृत का कलष।"।। जो अधर्म और अन्याय पथपर प्रवृत्त होते हैं, नारी की मर्यादा का उल्लंघन करते हैं, उनके दु:शासन रुप तामसिक प्रवृत्तियों के लिए वह विषवत् सर्वनाश का कारण बनती हैं और जो धर्म और न्याय के लिए संघर्ष करते है। जो नारी की महिमामयी सत्ता में आस्था रखते है, उन युधिष्ठिर रुप न्याय परायण पुरुषों के लिए अमृततत्व का संचार करती हैं, उन्हें विजय पथपर प्रवृत्त करती है।

कवि की दृष्टि से नर के लिए नारी एक ऐसी अद्‌भुत शक्ति है जो उसके कल्याण के लिए दु ख -पीडा यातना सहती हैं। उसकी सौदर्य-दीप्ति केवल रमणीयता का ही सृजन ही करती, वह तो दुख ताप की ऐसी दीप्ति हैं, जिसमे वेदना-करुणा के अश्रुकण मोतियो जैसे ज्योतित होते है। नारी की इसी दीप्ति से पुरुष में अपार साहस और अदम्य उत्साह के दर्शन होते हैं। नहीं तो क्या समुद्र पर पुल बाँधना संभव था? और कौरवो की सहस्त्र सेना का नाश होना सभव था? नारी चाहे प्रतिभासंपन्न हो या अनपढ पर उसका नारी होना ही पुण्य का कारण हैं, क्योंकि वह सृष्टि की विधात्री है। वह सृष्टि विकास के लिए संघर्षरत रहकर अनंत दुख सहती है। अपने अथक परिश्रम तथा रक्त की बूंद से सृष्टिको गतिमान उद्यमी बनाती हैं। मानवता के विकास का इतिहास नारी की वेदना और ऑसूओ के अनमोल मोतियों को लिखा गया हैं।

भारत की नारी इतिहास के उस उषःकाल से ही अपने महान त्याग और बलिदान से पुरुष को कर्मयोगी बनाकर उसे श्री, समृध्दि, आनंदी, जीवन की ओर प्रेरित कर अपनी महिमा को सिध्द करती आयी है। इस रुप मे द्रोपदी एक नारी व्यक्तित्व है। वह शाश्वत जीवनीशक्ति की प्रतीक है, जो युग-युग से पुरुष में शक्ति और तेज का संचार करनेवाली, कल्याणकारिणी, तारिणी नारी है। वह कृत्या, भी हैं, उर्वशी भी है और मंगलकारिणी भी है। इस दृष्टिसे नारी के गौरव और महत्व की ओर ध्यान दिया जाए तो स्पष्ट होता हैं कि भारतीय साधना महर्षियों तथा मनीषियो ने नारी के सौदर्य, उसकी कोमलता तथा मधुरता में महाशक्ति का प्रकाश देखा है। नारी शक्ति स्वरुपिणी है, क्योंकि उसमें वीर्य और ऐश्वर्य-सौदर्य और माधुर्य-स्नेह ओर ममता, प्रेम और त्याग आदि अनेक कोमल तथा शात गुणसमुह विद्यमान है।

3) **उदात्त भावोकी काव्यनिर्मिती**- कवि की दृष्टिसे कविता व्यक्ति, समाज एव ईश्वर को एक सूत्र में पिरोने का सात्विक और मांगलिक प्रयास है। कविता व्यक्ति और समाज के द्वंद्व को शांत करके उसे एक नवीन दिशा की ओर प्रवृत्त करती हैं। कविता के मूल में व्यक्ति और समाज की मंगल कामना की भावना विद्यमान रहती हैं, और वही उन्हें आस्था एव आस्तिकता के विषद आयामो की ओर ले जाती हैं। काव्य का प्रयोजन स्पष्ट करते समय नरेंद्र शर्मा ने कवि की संकीर्णता एव अंह से मुक्त रहने का संदेश दिया है और मानव सहानुभूति के प्रसार को काव्य का लक्ष्य माना हैं।

कवि का स्पष्ट कथन हैं कि 'द्रौपदी' में मेरा उद्‌देश्य पुरानी कहानी को मात्र दुहराना नही हैं।

मैं यह मानकर चला हूँ कि सहृदय पाठक महाभारत की कथा से भलीभाँति परिचित हैं। इसलिए मैंने संकेतों और संस्पर्शों को ही आलम् समझा हैं।"12 इस संदर्भ में कवि की रुचि और दृष्टि यह रही हैं कि उन्होंने अपने देशकाल और मनस्थिति का प्राचीन कथाओं पर आरोपण न करके उनके मर्मबीज खोजने का प्रयास किया है। जिसतरह प्राचीन पौराणिक कथाओं में विद्वानों ने ऐतिहासिक तथ्यों को खोजने का प्रयत्न किया हैं लेकिन कवि की रुचि तो प्रतीकों के अनुसंधान की दिशा में गई हैं। इस संदर्भ में वे आगे लिखते हैं"मैंने थोडा कहा हैं, और बहुत कुछ अपने सुधी, सुविज्ञ , और सहृदय पाठकोंकी जानकारी और समझदारी पर छोड दिया हैं। महाभारत की कथा कि लोकप्रियता के आलंबन के बिना यह संभव न था।"13 इससे स्पष्ट हो जाता हैं कि शर्माजीने अनुभूत सत्योंकी अभिव्यक्ति हृदय साधना से मानी हैं और उनका कहना हैं कि कवि को काव्य सृजन के समय अपने अंतस का विश्लेषण भी करना चाहिए। 'द्रौपदी' खंडकाव्य में कवि ने इसी तत्थ्य को प्रामाणिकता से पूर्ण करनेका प्रयास किया हैं। इससे एक बात स्पष्ट हो जाती हैं कि 'द्रौपदी' काव्य की रचना भी सामान्य कोटि के पाठकों के लिए न होकर सुधी, सुविज्ञ, और सहृदय पाठकों के, लिए की गई उच्च कोटि की प्रौढ रचना हैं, और उसका मानदंड लोकमंगल हैं।

इसतरह 'द्रौपदी' नारीशक्ति का एक शाश्वत नित्य नवीन प्रतीक हैं। कवि ने महाभारत की इस नारी को परंपरित रुप में ग्रहण न करके उसके पीछे कवि की व्यापक भावना हैं। द्रौपदी भारतीय क्षात्रतेज की जाज्वल्य ज्योतिशिखा हैं। एक असामान्य दिव्य प्रतीक हैं। आज समाज में कामकुंठा एवं विकृतियाँ पनप रही हैं, द्रौपदी का अवमूल्यन इस संदर्भ में किया जाता हैं, ऐसी दशा में कवि ने समाज को द्रौपदी काव्य के द्वारा पुन: सोचने के लिए बाध्य किया हैं।

उत्तरजय की विचारधारा

'द्रौपदी' खंडकाव्य के कई दिनों बाद कविने उत्तरजय की रचना की। इसमें 'द्रौपदी' काव्य की अगली कथा का वर्णन प्रतीकात्मक शैली में किया है। द्रोपदी में कविने महाभारत की कथा के द्वारा अपना अध्यात्मिक दृष्टिकोण तथा नारी के तेजबल का गुणगान करनेका सफल प्रयास किया हैं तो 'उत्तरजय' में महाभारत की प्रतीकात्मक कथाद्वारा समकालीन समकालीन समस्या से छूटकारा पाने के लिए तत्कालीन समाज को कर्मयोग साधना का संदेश दिया हैं। कविने इस काव्य केमाध्यम से अपने अनेक दृष्टिकोणों को व्यक्त किया हैं।

आज का साहित्यकार चाहे वह किसी भी साहित्यकृति को जन्म दे उससे मनोरंजन उसका उद्देश्य नहीं होता, तो वह एक निश्चित दृष्टिकोण या विचारधारा को लेकर किसी

उद्देश्य अथवा आदर्श की स्थापना करता हैं। कवि अपने समकालीन मानवजीवन की समस्याओं की व्याख्या के लिए ही कथावस्तु का संगठन करता हैं। उसके अनुरुप पात्रों की रचना करता हैं तथा उनकी बातचीत को हमारे सामने रखता हैं। इन सबके माध्यम से अपनी विचारधारा और आदर्श को प्रकट करता हैं।

'उत्तरजय' की रचना भी सोदेश्य हुयी हैं। कवि अपने इस खंडकाव्य में एक निश्चित चिचारधारा या दृष्टिकोण को लेकर चला हैं। काव्य की कथावस्तु और पात्र प्रतीकात्मक हैं। कविने अपने उद्देदश्य की पूर्ति के लिए विविध प्रकरण खंड सजाएँ है और पात्रोंकी अवतारणा की हैं। शर्माजीने कला को कला के लिए न मानकर जीवन के लिए माना है। कवि काव्य मानव जीवन को ऊँचा उठाने का काव्य हैं। वह उपयोगितावाद के आदर्श को लेकर चला हैं, इसीलिए 'उत्तरजय' काव्य की भावसंपदा बडी गरिमापूर्ण हैं। इस काव्य में भी कवि का विचार दर्शन स्पष्ट रुप से प्रकट हुआ है।

कविने 'उत्तरजय' की रचना 1965 के वर्ष में की हैं। स्वतत्रैता को प्राप्त किए तब हमें अठारह वर्ष हो गए थे। इन अठारह वर्षो में हमने बहुत कुछ खोया और बहुत कुछ पाया। अहिंसा, मैत्री और प्रेम के बल पर हमने स्वतंत्रता की प्राप्ति की और उसीका संदेश विश्वको दिया। राष्ट्र के कर्णधार पं. जवाहरलाल नेहरु ने विश्व शांति के मसीहा के रुप में पंचशील का नारा संसार को दिया, उसीसमय 1965 में चीन का आक्रमण हमारे देश पर हुआ। इस अप्रत्याशीत घटना से हमें ज्ञात हुआ कि राजनीति के क्षेत्र में कोरी भावुकता और आदर्श से कार्य नहीं चलता। शत्रु प्रेम की भाषा समझना, उसके लिए शस्त्र का प्रयोग करना आवश्यक है। इसतरह कविने वर्तमान काल की समस्याओं का हल सुझने के लिए पौराणिक प्रसंगों का सहारा लेकर तत्कालीन युगकी समस्याओं पर विचार किया हैं। उनकी इस विचारधारा के अनेक रुप हमें इस काव्यकृति में देखने को मिलते है।

1) **कर्मशील जीवन का संदेश-** उत्तरजय के द्वारा कवि ने हमें कर्मशील जीवन का संदेश दिया है। संसार में रहकर संसार के सुख-दुखो से संघर्ष करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करना और अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करना तथा मानव सेवा में अपना जीवन व्यतीत करना यही मानव जीवन का आदर्श होना चाहिए। उत्तरजय' में भी श्रीकृष्ण युधिष्ठिर को कर्म के लिए प्रेरित करते है। महाभारत के नरसंहारी युध्द के पश्चात धर्मराज युधिष्ठिर का चित्त बडा उद्विग्न होता है। वे इस युध्द से प्राप्त विजय को स्वीकारने के लिए तैयार नहीं है, क्योंकि उन्हें

SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR LIBRARY

इस बात का पश्चात्ताप हो रहा है कि उनके झूठ बोलने से गुरु द्रोणाचार्य की हत्या हुई। कर्ण और कौरवों का अंत हुआ इस दृष्टिसे वे ने महाभारत के युध्द को अधर्म युध्द मानते है और इसीलिए इस युध्द से प्राप्त विजय को वे स्वीकारना नहीं चाहते। वे अपना जीता हुआ राज्य दुर्योधन को लौटाना चाहते हैं, उसीतरह गुरुपुत्र अश्वत्थामा की मणि भी छीनना चाहते क्योकि उनके मनमें संसार के प्रति विरक्ति निर्माण होती है, जिससे उनका मन दुःख, ग्लानि, से भर जाता हैं, स्वाभाविकताः से संसार से पलायन के लिए प्रेरित होते हैं तभी श्रीकृष्ण उन्हें समझा देते हैं--

"कर्म-क्रिया-शील धर्म, धर्मराज तुम न अज्ञ।
मणिधर की मणि लेकर, पूर्ण करो कर्म यज्ञ।"।4

इसतरह युधिष्ठिर को श्रीकृष्ण द्वारा दिया गया संदेश युधिष्ठिर के लिए ही नहीं आज के मानव समाज के लिए बडा महत्वपूर्ण हैं। जो लोग संसार में रहकर अपने उत्तरदायित्वों से बचना चाहते हैं, अपने कर्तव्य कर्म के पालन से विमुख होते हैं, तो अकर्मण्य तथा पलायनवादी है तथा जो जीवन की अनपेक्षित घटनाओं से निराश होकर मुर्झाए हुए है उनके लिए भी यह संदेश बडा महत्वपूर्ण हैं।

2) **आदर्शवाद का यथार्थवाद से समन्वय-** आज हमारे समाज में जो आदर्शवादी पुरुष हैं वे जीवन के यथार्थ उसकी कटुता और भीषणता से घबराते है। उससे वे बचना चाहते हैं इसीलिए वे अपने जीवन में सफल नहीं होते। उत्तरजय' में कविने युधिष्ठिर को आदर्शवादी पुरुष का प्रतीक माना है, जिन्हें अपनी जीवन की यथार्थता झकझोर देती है,निराश बना देती है। कवि का विचार है कि आदर्शवादी पुरुष को यथार्थ से भयभीत न होकर उसे स्वीकार कर अपने कर्म का पालन करना चाहिए और मानव जीवन के कुत्सित रुप को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। आदर्श के बलपर आकाश में न उडकर यथार्थ की ठोस धरतीपर विचार करना चाहिए।

कवि ने कुरुक्षेत्र अर्थात कर्मक्षेत्र ही धर्मक्षेत्र माना हैं, क्योकि कर्म के द्वारा ही धर्म और मोक्ष प्राप्त होते है। कर्मद्वारा मुक्ति प्राप्त करने की प्रक्रिया मानव के आंतरिक तथा बाहरी व्यक्तित्व के लिए बडी महत्वपूर्ण हैं- क्योंकि इसी समय उसकी भूतलीय और आकाशीय वृत्तियों में द्वंद्व छिड जाता हैं। धर्मराज युधिष्ठिर भी आदर्शवादी है, वे आकाशतत्व के रुप है और आकाशतत्व आदर्श का प्रतीक है। कवि का उत्तरजय की भूमिका में कथन है- 'आकाश पुरुष युधिष्ठिर पृथा पृथ्वी माता के ऑचल मे पैलकर ही अपने पॉवोपर खडे हुए थे। पर उन्हें धरती के

ऑचल के मटमैलेपन से आच्छादित रहना न भाता था। भूतल से सदैव कुछ उपर उठे रहने की उनकी कामना थी और कामना थी पृथ्वीपर धर्मराज्य स्थापित करने की। इसीलिए उन्हें अंततः अपनी सिध्दि और मुक्ति के हेतु स्तरपर उतरकर ही कर्मयोग की साधना करनी पडी थी। ।5 कवि के इस कथन का अभिप्राय है कि मनुष्य का सच्चा कर्तव्य पृथ्वी की सेवा करना है। जब तक मनुष्य पार्थिव संसार की सेवा नहीं करता तबतक अपने कर्तव्य से मुक्त नहीं हो सकता। अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण रुप से नहीं निभा सकता मिट्टी की सेवा करने से ही मनुष्य का मन स्वच्छ निर्मल आकाश के समान पवित्र और शुध्द हो जाता हैं।

3) पीडा भोग का संदेश-- 'उत्तरजय' काव्य के द्वारा कविने हमें कर्मशील जीवन का ही संदेश नही दिया अपितु एक आदर्श भी समाज के सामने रखा है। वह यह कि हमें संसार की पीडा से घबडाना नहीं चाहिए, अपितु उसे स्वीकार करना चाहिए क्योंकि पीडा मानव की कायरता संघर्षो से उत्पन्न शाप तापको नष्ट करती हैं।

मनुष्य सांसारिक पीडाओं से व्यथित होकर दुख की ज्वाला से उसका जीवन अमंगलमय बनता हैं, क्योंकि मनुष्य पीडा को सहन नहीं करना चाहता। पीडा को स्वयं सहन न करना यही मनुष्य जीवन की कायरता है। इसी कायरता से मनुष्य पाप कर्म करता कविता कथन है-- प्राणी पीडा के वशीभूत है, जीवन हैं तो पीडा अवश्य है, पीडा से बचना अति पीडा को न्योता देना हैं। ।6 वास्तव मनुष्य कर्म संकुल जीवन के संघर्षो से उत्पन्न पीडा से पलायन करता है, उससे दूर भागने का प्रयास करता है।

अश्वत्थामा को संबोधित करते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि अश्वत्थामा तुम पीडा भीरु बन गए हो। पीडा से तुम्हें भय लगता है, इसीलिए पीडा से तुम बचना चाहते हो यह उचित नहीं यह तो कायरता है, नपुसंकी का कार्य है। तुम तो मनुष्य रुप मे शंकर का अंश हो। शंकर ने समुद्र मथन के अवसरपर विषपान किया था। वे पीडा से डरे नहीं। उन्होंने पीडा को सहन किया उसीप्रकार तुम भी पीडा को स्वीकार करो। उससे भयभीत मत हो। पीडा से दूर भागने की प्रवृत्ति ही अति पीडा को जन्म देती हैं। यहाँ कवि संसार से पलायनवाद के स्थानपर संसार में रहकर ही पीडा से संघर्ष करने की प्रेरणा हमे दे रहा है। वह हमे निवृत्ति का मार्ग नहीं वृत्ति का मार्ग अपनाने को कहता है।

जिसतरह अश्वत्थामा पीडा से बच-बचकर चलने के कारण ही पर पीडक बने और फिर प्रतिक्रियावश अतिपीडा के चक्र में फँसे उसीतरह आज भी हमारे समाज में ऐसे लोग हैं जो दूसरों की पीडा को स्वयं नहीं अपनाना चाहते, बल्कि अपनी पीडा को दूर करने के लिए

दूसरो को पीडित करते है। अपने दुखों को टालने के लिए दूसरों को दुखी बनाते हैं यह राक्षसी कार्य हैं। कवि ने हमारे सामने भगवान शिव का आदर्श रखकर स्पष्ट किया है कि जिसतरह शिवजीने सृष्टि के कल्याण के लिए हलाहल का पान किया था जिसतरह तपन से स्वर्ण निर्मल और शुध्द होता है- उसीतरह दुख और पीडा की ऑच में तपकर मानव जीवन निर्मल और पवित्र बनता है। इस तरह पीडा के बारे में कवि का यह दृष्टिकोण हैं कि पीडा को सहन करना ही सच्चा आत्मज्ञान है। दूसरो को पीडा न पहुँचाकर स्वंय पीडा को स्वीकार करना ही सच्चा ईश्वरत्व है। इसतरह कविने 'उत्तरजय' में अश्वत्थामा द्वारा पीडा भोग का संदेश दिया हैं।

4) **अहिंसा का आदर्श** - कविवर शर्माजी के विचारोंपर गांधीवाद का प्रभाव स्पष्ट हैं जिससे उत्तरजय में कविने अहिंसा के आदर्श को भी हमारे सामने रखा हैं। श्रीकृष्ण जब युधिष्ठिर से अश्वत्थामा के मस्तक की मणि छीनने के लिए कहते है, तो युधिष्ठिर कहते है कि हिंसा का बदला हिंसा से नहीं चुकाया जा सकता। हिंसा से तो हिंसा ही बढती है।"।7 शत्रुता और द्वेष शत्रुता और द्वेष को ही जन्म देती हैं। यह चक्रसमाप्त नही होता। हिंसा हिंसा के पश्चात हिसा यह चक्र चलता ही रहता है। इसीलिए न मै इन्द्र हूँ, और न अश्वत्थामा मेरे लिए वृत्रासुर के समान है। जिसप्रकार इन्द्र ने वृत्रासुर का वध किया था उसप्रकार मैं अश्वत्थामा का वध नही करुँगा। द्रोणाचार्य के पुत्र ब्राम्हण देवता अश्वत्थामा जो सुर्य के समान ही प्रकाशमान है, इसीलिए अवध्य है।

युधिष्ठिर के मुख से कही गई हिंसा से प्रतिहिसा रुकती ही नही अहिंसासंबंधी कवि के इन विचारों से गांधीवादी दर्शन स्पष्ट होता हैं। गांधीवादी दर्शन भी यही कहता हैं कि हिंसा का बदला हिसा से नही लिया जा सकता। हिसा का प्रत्युत्तर तो अंहिसा है इसतरह कविने अहिसा के आदर्श को स्पष्ट किया है।

गीता के निष्काम साधना का संदेश - कवि ने अपने काव्य में गीता के मूलदर्शन को व्यक्त करते हुए निष्काम साधना का संदेश दिया हैं। गीता के विचार दर्शनानुसार मनुष्य कर्म करने में ईश्वर का निमित्त मात्र है। युधिष्ठिर से श्रीकृष्ण कहते है कि मनुष्य जीवन का मूलमंत्र है कि वह संसार में रहकर कर्मपालन से मुक्त नहीं हो सकता। कर्म पालन करते हुए ही वह अपने धर्म का पालन कर सकेगा। कर्म पालन ही सच्चा धर्म है कर्म करता हुआ दो भुजावाला मनुष्य चार भुजावाले विष्णु भगवान का निमित्त मात्र है कवि का कथन है-

"द्विभुज साध्य कर्म विदित, अविदित है कारण बल।"।8

मनुष्य के रुप में भगवान ही कर्म करता है इसीलिए ये कर्म कभी निष्फल नही होते, अर्थात मनुष्य कर्म करता है। इसे वह जानता है, परंतु वह कर्म ईश्वर के अधीन होकर करता है, जिसे वह जानता है, कर्म का फल भी ईश्वराधीन होता है। इसतरह मानव प्राणी का तो कर्तव्य केवल यही है कि वह कर्म करें, फल की कामना न करें। फल को ईश्वर के अधीन छोड दें।

आज हमारा मानव समाज इस आदर्श को त्याग कर विपरित दिशा में जा रहा है। वह कर्म से विमुख होकर फल प्राप्ति की आशा करता है। आज का विद्यार्थी श्रम करना नहीं चाहता पर उसका फल पाना चाहता है। आज का नेता जनता की सेवा तो नही करना चाहता पर यश चाहता है। तात्पर्य आज बिना श्रम से लोग धनवान बनना चाहते है, जिससे आज समाज मे अनैतिकता, अनाचार और भ्रष्टाचार का बोलबाला है। कवि इसी अनैतिकता, अनाचार और भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए निष्काम कर्म साधना का संदेश देना चाहता है।

5) अत्याचार और अनाचार के विरुध्द शक्ति का प्रयोग--

कवि के विचारों में समसामायिक परिस्थितियोंकी स्पष्ट छाप है। गीता का आधार लेकर श्रीकृष्ण के मुख से कवि ने अपनी विचारधारा को स्पष्ट किया है कि जब संसार से अनीति और अनाचार का बोलबाला होगा, दुष्ट जनो के हाथो सज्जन पुरुष पीडित होगे, तब भगवानः पृथ्वी के दुख का भार उतारने के लिए अवतार लेते है। शस्त्र धारण कर दुष्टोंका संहार करते है। कवि ने उत्तरजय में इसे इसतरह स्पष्ट किया है--

"नरवर यदि शस्त्रहीन, नारायण शस्त्र युक्त।
भारत को होना है, केशव का अनुयायी।"।9

कवि की दृष्टिसे उपर्युक्त पंक्तियोंसे भारत को होना है केशव का अनुयायी अत्यंत महत्वपूर्ण है। कविने अपनी उपदेशात्मकता को स्पष्ट करने के लिए कहा है कि पापियो के अत्याचारो को दूर करने के लिए हम प्रेम और शाति के मार्ग को नहीं अपना सकते। इसके लिए तो हमे शस्त्र ही उठाना पडेगा। जिसतरह कृष्ण ने दुष्ट कंस का संहार किया रामने अत्याचारी रावण का वध किया उसीप्रकार भारतीयोंका भी यही कर्तव्य है कि अपने शत्रुओं के विरुध्द हथियार उठाने चाहिए। प्रेम और शांति की भाषा तो शत्रु नहीं जानता इसलिए युध्द का मार्ग ही अपनाना चाहिए।

उत्तरजय काव्य का चित्रण कविने । जनवरी ।965 मे किया है। इसी बीच चीन का आक्रमण हमारे देशपर हुआ था तथा कुछ समय पश्चात पाकिस्तान से युध्द का संघर्ष

हुआ। इस दृष्टि से कवि मान्यता है भारत जैसे पंचशील तत्वो को माननेवाले देशपर अगर चीन और पाकिस्तान जैसे राष्ट्रोद्वारा अनीतिपूर्ण हमला होगा तो उसके साथ युध्द करना अनिवार्य है, इसी समय प्रेम और शांति की नीति से काम नहीं चल सकता। जिसतरह महाभारत युध्द में गीता का उपदेश श्रीकृष्ण ने अर्जुन को दिया, उसी का पालन कर अर्जुन ने कौरवों का संहार करने के लिए हथियार उठाएँ।'20 उसी प्रकार श्रीकृष्ण की नीति का अनुसरण कर भारत को पुनः चीन और पाकिस्तान के लिए हथियार उठाने चाहिए।

6) नारी ही पुरुष की कर्म प्रेरक शक्ति है-- नारी पुरुष की वस्तुत: जीवनीशक्ति है। वही उसे कर्म की प्रेरणा देनेवाली है। नारी के बिना पुरुष का जीवन अधूरा है। इस संबंध में कविने भूमिका मे लिखा है- पाँच पाडवों को मैंने पाँच तत्वो का प्रतीक रुप माना है। और उन्हे होमजा जीवनीशक्ति द्रौपदी द्वारा एकही व्यक्तित्व मे सश्लिष्ट जाना है। 21 युधिष्ठिर द्रौपदी से कहते हैं कि हे देवि तुमने ही क्षिति, जल, पावक, समीर, आकाश, आदि पंचभूत तत्वों के प्रतीक नकुल, सहदेव, अर्जुन, भीम और मुझे एकरुप प्रदान किया था। महाभारत युध्द मे अपना सांसारिक कर्तव्य पूरा करने लिए तुम्हारा ही मार्गनिर्देशन मिला । तुमने ही हमे कर्तव्य मार्ग बतलाया। 22 इसतरह पांडव पुत्रो के लिए द्रौपदी ही जीवनीशक्ति थी उसीः के प्रेरणा से महाभारत का युध्द हुआ था। इसतरह द्रौपदी को कवि ने जीवनीशक्ति का रुप दिया है। वास्तव में नारी ही पुरुष की जीवनीशक्ति है। नारी की प्रेरणा से ही मनुष्य कर्म साधना मे प्रयुक्त होता है।

इसतरह कविने उत्तरजय में ऐसी अनेक मनोवैज्ञानिक समस्याओ को रखा है जो वर्तमान व्यक्ति और समाज से सीधा सबध रखती है। कवि ने इस काव्य में इस बात पर बल दिया है कि संसार में नितात आदर्शवादी बनकर नही रहा जा सकता। संसार की अर्नीति और अनाचार को दूर करने के लिए कठोर बनना होगा। निष्काम कर्म की साधना के रुप मे गीता के आदर्श के आदर्श को अपनाना होगा। संसार की पीडाओं से पलायन करना उचित नही अपितु उनसे संघर्ष कर उन्हे दूर करना होगा। कवि के चिंतन और अनुभूति का मणिकाचन संयोग इस कृति में हमें दिखाई देता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि नरेंद्र शर्मा का जीवन दर्शन अध्याधिक उदार और व्यापक है, उन्होंने अपनी कृतियों में भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों ही प्रकारकी जीवन दृष्टियो का सत्य एवं सुखद समन्वय प्रस्तुत किया है। उनके समस्त काव्य में उनकी यह जीवन दृष्टि इसप्रकार से घुल मिल गई है कि पता ही नही चलता कि दर्शन और काव्य किस

किस सीमा पर परस्पर मिलते है और किस सीमापर अलग होते हैं।

----------*----------*----------*----------*----

संदर्भ-सूची

1) लक्ष्मीनारायण शर्मा- नरेंद्र शर्मा और उनका काव्य-पृ.93 सं.1967.

2) दुर्गाशंकर मिश्र- नरेंद्र शर्मा का काव्य एक विश्लेषण पृ.153 सं.1983.

3) फूलचंद जैन सारंग- नरेंद्र शर्मा और उनका उत्तरजय पृ. 218 सं.1991.

4) नरेंद्र शर्मा - द्रौपदी पृ.-9 सं.1986.

5) वही पृ. 14.

6) वही पृ. 15.

7) लक्ष्मीनारायण शर्मा-नरेंद्र शर्मा और उनका काव्य- पृ.105. सं.1967.

8) डॉ. वल्लभदास तिवारी- हिंदी काव्य में नारी पृ.83. सं.1974.

9) नरेंद्र शर्मा-द्रौपदी पृ.15 सं.1986.

10) वही पृ.-16.

11) वही पृ.127.

12) वही पृ. 9

13) वही पृ.15.

14) नरेंद्र शर्मा-उत्तरजय-पृ.28 सं.1966.

15) वही पृ. 5

16) वही पृ.3.

17) वही पृ.29.

18) वही पृ.28.

19) वही पृ.29.

20) फूलचंद जैन सारंग- नरेंद्र शर्मा और उनका उत्तरजय पृ.74 सं. 1991.

21) नरेंद्र शर्मा-उत्तरजय- पृ.4 सं.1966.

22) वही पृ.53.